पैरवी संवाद

जून 2022

पब्लिक एडवोकेसी इनीशिएटिव्स फॉर राइट्स एण्ड वैल्यूज़ इन इण्डिया

विश्व पर्यावरण दिवस के पचास वर्ष

पर्यावरण कितना बेहतर, कितना बदतर

अजय झा

5 जून 2022 को हर वर्ष की तरह विश्व पर्यावरण दिवस मनाया गया। पर्यावरण दिवस मनाने की प्रथा 5 जून 1972 में शुरू हुई थी जब स्टॉकहोम में मानव पर्यावरण की वैश्विक बैठक के सफल आयोजन पर राष्ट्रसंघ की आमसभा ने हरेक वर्ष 5 जून को विश्व पर्यावरण दिवस के रूप में मनाना तय किया। स्टॉकहोम की बैठक की थीम 'केवल एक दुनिया' (only one world) थी। इस वर्ष भी पर्यावरण दिवस की थीम 'केवल एक दुनिया' ही थी। इस वर्ष स्टॉकहोम बैठक की पचासवीं सालगिरह मनाने के लिए स्टॉकहोम में 'STOCKHOLM+50' के नाम से महत्वपूर्ण अंतर्राष्ट्रीय बैठक आयोजित की गई जिसमें दुनिया के कई देशों ने हिस्सा लिया और पर्यावरण के कई पहलुओं पर अपनी चिंता जताई।

यह बेहद दुःखद है कि 50 वर्ष पहले पर्यावरण पर जो चिंता थी वह आज भी उतनी ही बड़ी चिंता है।

दुनियाभर में 90 लाख लोग वायु प्रदूषण जनित कारणों से मृत्यु को प्राप्त होते हैं और सिर्फ आठ प्रतिशत लोगों को साफ और स्वच्छ हवा उपलब्ध है।

दुनिया की राजनीति में पर्यावरण

ऐसा नहीं है कि 50 वर्षों में पर्यावरण में कुछ भी सुधार नहीं हुआ। दुनिया के कई देश (खासकर विकसित देश) जहाँ 50 वर्ष पहले प्रदूषित हवा और प्रदूषित नदियाँ पर्यावरण संबंधी मुख्य चिंता का विषय थे, वह पहले से कहीं बेहतर हैं। लेकिन यह बात तीसरी दुनिया के देशों के बारे में नहीं कही जा सकती। दरअसल, पिछले पचास सालों में विकसित देशों ने अपने यहाँ प्रदूषण कम करके तीसरी दुनिया के देशों को कारखाने में तब्दील कर दिया है।

कई अमरीकी और यूरोपीय कंपनियाँ वहाँ खपत होने वाली वस्तुओं की पूर्ति के लिए चीन, भारत, बांग्लादेश, इंडोनेशिया और श्रीलंका इत्यादि देशों में उत्पादन करती हैं। तीसरी दुनिया में बढ़ते हुए उत्सर्जन और प्रदूषण का यह एक प्रमुख कारण है।

1972 की स्टॉकहोम की बैठक ने दुनिया का ध्यान पर्यावरण क्षरण पर आकर्षित किया जिसके फलस्वरूप कई देशों ने पर्यावरण को बेहतर करने का प्रयास किया। इस बैठक के बाद राष्ट्रसंघ पर्यावरण कार्यक्रम की स्थापना भी की गई। पर्यावरण कार्यक्रम ने 50 वर्षों में पर्यावरण पर जागरूकता और नीति बनाने पर गहन काम किया। इन वर्षों में ओजोन छिद्र को भरने, कई घातक रसायनों का प्रयोग खत्म करने और यातायात ईंधन में शीशे का उपयोग बंद करने में इसकी महती भूमिका रही। हालाँकि पर्यावरण की चिंता को अर्थव्यवस्था के स्तर पर लाने के लिए यह अभी भी जूझ रहा है। यह इस बात से स्पष्ट है कि पर्यावरण पर इतनी चर्चा के बाद भी वैश्विक पर्यावरण की बैठक राष्ट्राध्यक्षों के स्तर पर अभी भी नहीं होती है।

दुनिया की राजनीति में पर्यावरण को अभी भी (अर्थव्यवस्था के बाद) दोयम दर्जे का ही महत्व दिया जाता है। पर्यावरण कार्यक्रम अभी भी राष्ट्रसंघ की आमसभा का एक कार्यक्रम मात्र है, न कि एक स्वतंत्र एजेंसी। इससे पर्यावरण कार्यक्रम के महत्व व सरकारों पर इसके प्रभाव पर सीधा असर पड़ता है।

पचास वर्षों में पर्यावरण की स्थिति

पिछले पचास वर्षों में वायु प्रदूषण, प्लास्टिक प्रदूषण, जैव विविधता में कमी और जलवायु इत्यादि का संकट कई गुना बढ़ा है। निकट भविष्य में इनके समाधान की अपेक्षा शायद ही की जा सकती है। दुनियाभर में 90 लाख लोग वायु प्रदूषण जनित कारणों से मृत्यु को प्राप्त होते हैं और सिर्फ 8 प्रतिशत लोगों को साफ और स्वच्छ हवा उपलब्ध है। दक्षिण पूर्व एशिया के देशों में वायु प्रदूषण की बड़ी समस्या है लेकिन दक्षिण एशिया में स्थिति और भी बदतर है, जहाँ 30 में से 21 सर्वाधिक प्रदूषित शहर हैं। अकेले भारत में वायु प्रदूषण जनित कारणों से प्रतिवर्ष तकरीबन 12 लाख मौतें होती हैं।

पिछले पचास वर्षों में प्लास्टिक का उत्पादन तकरीबन 7 गुना बढ़ा है। हम हरेक वर्ष करीब 1 करोड़ टन प्लास्टिक समुद्र में फेंक रहे हैं, जो कि आने वाले कुछ दशकों में 9 करोड़ टन तक बढ़ जाने की संभावना है। एशिया महाद्वीप में ही पूरी दुनिया का आधा से अधिक प्लास्टिक उत्पादन होता है। प्लास्टिक से न सिर्फ समुद्री पारिस्थितिकी पर बल्कि मानव स्वास्थ्य और समुद्री उत्पादन पर आधारित अर्थव्यवस्था वाले देशों की अर्थव्यवस्था पर गहरा प्रभाव पड़ा है। मानवों की रक्त प्रणाली में अब महीन प्लास्टिक का पाया जाना आम बात है।

जैव-विविधता में लगातार होती हुई कमी एक घोर पर्यावरणीय संकट की ओर इशारा करता है। दुनियाभर में पाए जाने वाले 70 लाख पुष्प, पादप और जंतुओं में से 10 लाख लुप्त होने की कगार पर हैं। इससे सबसे बड़ा खतरा खाद्य उत्पादन पर अपेक्षित है।

जलवायु परिवर्तन और 1.5 डिग्री का लक्ष्य

सबसे बड़ा संकट जलवायु परिवर्तन का है। जलवायु के संकट को इस शताब्दी का सबसे बड़ा संकट माना जा रहा है। वातावरण में ग्रीनहाउस गैसों (खासकर कार्बन डाइऑक्साइड और मीथेन) की सघनता बढ़ने से मौसम चक्र में बदलाव, तापमान में वृद्धि, समुद्र तल के स्तर का ऊपर आना, मरुस्थलीकरण, समुद्रों में सांद्रीकरण, और बाढ़, सुखाड़, चक्रवात, गर्म हवा की बारंबारता के प्रभाव क्षेत्र और बढ़ते हुए दुष्प्रभाव से दुनिया का हरेक हिस्सा ग्रस्त है। कई वर्षों के प्रयास के बद तय हुई पेरिस संधि जिसमें देशों ने बढ़ते हुए तापमान को 1.5 डिग्री या 2 डिग्री सेल्सियस से कम पर रोकने की प्रतिबद्धता व्यक्त की थी, के लक्ष्यों को पाना दुरूह लगता है। हालिया वैज्ञानिक रिपोर्ट (WMO, 2022) की मानें तो दुनिया का तापमान 2025 तक ही कम से कम एक साल के लिए 1.5 डिग्री से अधिक जाने की 50 प्रतिशत संभावना है। 2015 में यह संभावना शून्य थी। 1.5 डिग्री के लक्ष्य को पाने के लिए पूरी दुनिया के उत्सर्जन में 2025 के बाद से ही कमी और 2030 तक 43 प्रतिशत कमी की आवश्यकता है।

कोविड महामारी के दौरान जब सारी दुनिया ठप पड़ी थी, 2020 में उत्सर्जन में सिर्फ 5.4 प्रतिशत की कमी आई। 1.5 डिग्री का लक्ष्य हासिल करने के लिए यह कमी 8 साल तक लगातार बनाए रहना होगा। गैर पारंपरिक और अक्षय ऊर्जा में वृद्धि के बावजूद यह लक्ष्य मुश्किल लगता है। मानव संतति अगर और 50 साल जीवित रही तो उसे ऐसे पर्यावरण और जलवायु संकट का सामना न करना पड़े ऐसी कामना ही कर सकते हैं।

■

वेबिनार: महिलाओं की नजर से युद्ध

दुनिया रूस और यूक्रेन के बीच एक और विनाशकारी और दर्दनाक युद्ध देख रही है। फिर से महिलाओं को युद्ध के भयानक परिणाम भुगतने पड़ रहे हैं। युद्ध जीवन, आजीविका, अर्थव्यवस्था, परिवार और बहुत कुछ नष्ट कर देते हैं लेकिन महिलाएं सबसे अधिक प्रभावित होती हैं। मौजूदा असमानताएं और बढ़ जाती हैं व संघर्ष के दशकों बाद भी महिलाओं को इसका खामियाजा भुगतना पड़ता है। युद्ध महिलाओं को यौन हिंसा और शोषण के प्रति अधिक असुरक्षित बनाता है क्योंकि लिंग आधारित हिंसा को रोकने वाले संस्थानों के साथ-साथ सामाजिक नेटवर्क भी टूट जाते हैं। महिलाओं का शरीर एक युद्ध का मैदान बन जाता है, जिस पर विरोधी ताकतें संघर्ष करती हैं। महिलाओं के नजरिये से युद्ध के अर्थ और निहितार्थ पर चर्चा करने के लिए पैरवी द्वारा ८ मार्च को वेबिनार का आयोजन किया गया था। प्रख्यात महिला अधिकार कार्यकर्ता और लेखिका नाइश हसन, स्वतंत्र पत्रकार और पेन लिटरेसी की संस्थापक डॉ. शिप्रा माथुर, आरएमएलएनएलयू, लखनऊ से डॉ. अपर्णा सिंह और दिल्ली विश्वविद्यालय की सहायक प्रोफेसर डॉ. अदिति नारायणी पासवान इस कार्यक्रम के मुख्य वक्ता

थे। वक्ताओं ने शांति प्रक्रियाओं में महिलाओं की भागीदारी सुनिश्चित करने की वकालत की। शांति और सुरक्षा प्रक्रियाओं में सुधार के लिए महिलाओं की पूर्ण और सार्थक भागीदारी महत्वपूर्ण है, इसलिए निर्णय लेने की प्रक्रिया और मानवीय प्रतिक्रिया में महिलाओं को शामिल करना यह सुनिश्चित करने के लिए आवश्यक है कि उनके अधिकारों को बरकरार रखा जाए। कुछ विशेषज्ञ लैंगिक समानता के तहत एक सकारात्मक बदलाव के रूप में सैन्य संरचनाओं में महिलाओं को शामिल करने की भी वकालत करते हैं।

भारत में जनसंख्या नियंत्रण कानूनी या स्वैच्छिक

दीनबंधु वत्स

भारत में जनसंख्या नियंत्रण राजनीतिक विमर्श का एक महत्वपूर्ण विषय रहा है। आजादी के बाद संसद में जनसंख्या नियंत्रण को लेकर 35 से अधिक प्राइवेट मेम्बर बिल विभिन्न दलों के सांसद पेश कर चुके हैं, जिनमें 15 कांग्रेस के सांसदों की ओर से पेश किए गए हैं। 2018 में लगभग 125 सांसदों ने राष्ट्रपति से भारत में दो बच्चों की नीति लागू करने का आग्रह किया था। साल 2019 के स्वतंत्रता दिवस के भाषण में ''जनसंख्या विस्फोट'' शब्द का इस्तेमाल कर प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी ने इस बहस को वापस सुर्खियों में ला दिया था। इसके तुरंत बाद बीजेपी के नेतृत्व वाली असम सरकार ने असम जनसंख्या और महिला सशक्तिकरण नीति को लागू करने का फैसला किया। इसके तहत, जनवरी 2021 से असम में दो से अधिक बच्चे वाला कोई भी व्यक्ति सरकारी नौकरी के लिए पात्र नहीं होगा। 12 राज्यों में ऐसे ही प्रावधान लागू हैं जो दो-बाल नीति की शर्तों को पूरा न कर पाने की स्थिति में योग्यता व अधिकार से जुड़े प्रतिबंध लगाते हैं। इन प्रतिबंधों में पंचायती राज संस्थाओं के चुनाव लड़ने से लोगों पर रोक लगाना भी शामिल है।

एक ऐसे देश में जनसंख्या पर बहस अपरिहार्य है जो वर्तमान में सबसे अधिक आबादी वाले देश चीन को पीछे छोड़ने वाला है। संयुक्त राष्ट्र के आर्थिक और सामाजिक मामलों के विभाग के अनुमान के अनुसार, भारत की जनसंख्या 2030 तक 1.5 बिलियन और 2050 में 1.64 बिलियन तक पहुंच जाएगी। वहीं चीन की आबादी 2030 तक 1.46 बिलियन तक पहुंच जाने के अनुमान हैं। वर्तमान में दुनिया की 16 प्रतिशत आबादी भारत में वैश्विक सतह क्षेत्र के केवल 2.45 प्रतिशत और जल संसाधनों के 4 प्रतिशत हिस्से के साथ निवास करती है। पारिस्थितिकी तंत्र के हाल में हुए आकलनों ने अन्य प्रजातियों के विलुप्त होने और संसाधनों की हो रही कमी में मानव आबादी की भूमिका को इंगित किया है, जिसके बाद वैश्विक स्तर पर भी जनसंख्या विस्फोट को लेकर बहस छिड़ गई है। हालांकि 1994 में जब भारत ने जनसंख्या और विकास की घोषणा पर अंतरराष्ट्रीय सम्मेलन में हस्ताक्षर किया था, तो उसमें परिवार के आकार और दो प्रसव के बीच के समय के निर्धारण के बारे में निर्णय लेने का अधिकार दंपत्ति को दिया था।

विशेषज्ञों का मानना है कि वस्तुतः भारत जनसंख्या को स्थिर करने की राह पर है। इसलिए जनसंख्या नियंत्रण को सुनिश्चित करने के लिए दंडात्मक उपायों की शुरुआत पर जोर दिया जाना गैरजरूरी है।

क्या भारत जनसंख्या विस्फोट के कगार पर है?

भारत 350 मिलियन लोगों के साथ आजादी के दौरान भी सबसे अधिक आबादी वाले देशों में से एक था। यही कारण था कि यह 1951 में परिवार नियोजन कार्यक्रम शुरू करने वाला पहला विकासशील देश बना। तब से अब तक, 2019 में 1.37 बिलियन लोगों के साथ, देश की आबादी चार गुनी बढ़ गई है। इस देश की आबादी को स्थिर रखने के लिए कुल प्रजनन दर (टीएफआर) 2.1 होनी चाहिए। संयुक्त राष्ट्रसंघ इसे प्रतिस्थापन स्तर का प्रजनन दर मानता है। लंबे समय तक इस स्तर की प्रजनन दर होने पर जनसंख्या धीरे-धीरे स्वतः स्थिर होने लगती है। भारत अब इसके बहुत करीब है, क्योंकि कई राज्यों में कुल प्रजनन दर 2.1 से नीचे है। 2019-21 में हुए राष्ट्रीय परिवार स्वास्थ्य सर्वेक्षण 5 के अनुसार भारत की कुल प्रजनन दर 2.0 तक पहुंच गई है। अधिकांश भारतीय राज्यों ने पहले ही 2.1 कुल प्रजनन दर हासिल कर ली है। कई राज्यों मे प्रजनन दर 2.0 से भी कम है। आंध्र प्रदेश (1.7), असम (1.9), गोवा (1.3), गुजरात

(1.9), हिमाचल प्रदेश (1.7), कर्नाटक (1.7), केरल (1.8), महाराष्ट्र (1.7), मिजोरम (1.9), नागालैंड(1.7), सिक्किम (1.1), त्रिपुरा (1.7), पश्चिम बंगाल (1.6) जैसे राज्यों में कुल प्रजनन दर प्रतिस्थापन स्तर से भी नीचे है। हालांकि, बिहार (2.98), उत्तर प्रदेश (2.3), झारखंड (2.26), मेघालय (2.91), मणिपुर (2.17) जैसे राज्यों में अभी भी कुल प्रजनन दर प्रतिस्थापन स्तर से अधिक है। आर्थिक सर्वेक्षण 2018-19 के अनुसार भारत में अगले दो दशकों में जनसंख्या वृद्धि में तेजी से गिरावट की संभावना है।

जन संख्या नियंत्रण के लिए जरूरी कदम

जनसंख्या नियंत्रण पर चल रही मौजूदा बहस में कई जरूरी सवाल पीछे छूट जा रहे हैं। महिलाओं के शिक्षा स्तर में वृद्धि, बाल विवाह में कमी, महिला स्वावलंबन, गर्भनिरोधक के प्रयोग में वृद्धि जैसे कई जरूरी मुद्दे हैं जिसे विमर्श के केंद्र में रखने की जरूरत है। महिलाओं में शिक्षा के स्तर में सुधार और बाल विवाह में कमी के साथ धीरे-धीरे प्रजनन दर में भी कमी आती है। प्रति महिला बच्चों की संख्या में उनके स्कूली शिक्षा के स्तर के साथ गिरावट आती है। राष्ट्रीय स्तर पर 2015-16 के मुकाबले 2020-21 में 18 वर्ष से कम उम्र में शादी की दर 26.8 प्रतिशत से घट कर 23.3 प्रतिशत हो गया, वहीं दस वर्ष या उससे अधिक की स्कूली शिक्षा प्राप्त करने वाली महिलों की संख्या 35.7 प्रतिशत से बढ़ कर 41 प्रतिशत हो गई। इसी दौरान राष्ट्रीय स्तर पर प्रजनन दर भी 2.2 से घट कर 2.0 हो गई। राज्यों की स्थिति भी कमोबेश इसी तरह की है। बिहार जैसे राज्य, जहां 18 वर्ष से कम उम्र में शादी की दर (40 प्रतिशत) दस वर्ष या उससे अधिक की स्कूली शिक्षा प्राप्त करने वाली महिलाओं की संख्या (28 प्रतिशत) राष्ट्रीय स्तर से खराब है, वहाँ प्रजनन दर भी राष्ट्रीय औसत से बेहतर नहीं हैं।

राष्ट्रीय परिवार स्वास्थ्य सर्वेक्षण का विश्लेषण पिछले कुछ वर्षों में प्रजनन दर में आई गिरावट को व्यक्त करता है। 1992-93 से 1998-99 तक भारत की कुल प्रजनन दर 3.4 से घटकर 2.9 रह गई। इस दौरान, 18 वर्ष की आयु से पहले शादी कर लेने वाली महिलाओं की संख्या में 7.7 प्रतिशत की गिरावट आई। इस समय, विवाहित महिलाओं द्वारा गर्भ निरोधकों के उपयोग में 17.26 प्रतिशत की वृद्धि हुई है। राष्ट्रीय परिवार स्वास्थ्य सर्वेक्षण-4 उन राज्यों में कुल प्रजनन दर में बढ़ोतरी दर्शाता है, जहां बाल विवाह की संख्या में वृद्धि हुई है। 18 वर्ष से पूर्व विवाह करने वाली 20 से 24 वर्ष की आयु की महिलाओं की संख्या का प्रतिशत बिहार में 42.5 था और उत्तर प्रदेश में 21.1 था। लेकिन केरल और पंजाब में यह आंकड़ा केवल 7.6 प्रतिशत का था। 1998-99 से 2005-06 तक कुल प्रजनन दर 2.9 से घटकर 2.7 रह गई। इस अवधि के दौरान देश ने महिलाओं की मानसिकता में एक बदलाव देखा। गर्भ निरोधकों के उपयोग में 13.3 प्रतिशत की वृद्धि हुई और बाल विवाह में 5.2 प्रतिशत की गिरावट आई। यह डेटा 1998-99 से 2005-06 के दौरान 15 से 19 वर्ष की आयु की विवाहित महिलाओं द्वारा गर्भ निरोधकों के उपयोग में 8 से 13 प्रतिशत तक की वृद्धि दर्शाता है। 2005-06 से 2015-16 तक आते-आते कुल प्रजनन दर 2.7 से घटकर 2.2 हो गई जो प्रतिस्थापन दर के करीब है। अमेरिका स्थित गटमाचेर इंस्टीट्यूट नामक एक शोध और नीति संगठन का अध्ययन कहता है कि 2015 में भारत में 15.6 मिलियन गर्भपात हुए। इसका मतलब है कि 15 से 49 वर्ष की आयु की प्रति 1,000 महिलाओं पर गर्भपात की दर 47 थी। इसी तरह, यूनाइटेड स्टेट्स एजेंसी फॉर इंटरनेशनल डेवलपमेंट (यूसेड) के 2018 के एक अध्ययन में कहा गया है कि ''राष्ट्रीय परिवार स्वास्थ्य सर्वेक्षण-3 से राष्ट्रीय परिवार स्वास्थ्य सर्वेक्षण-4 तक कुल प्रजनन दर में 18.5 प्रतिशत से अधिक गिरावट आई है। गिरावट गर्भपात (62 फीसदी) और शादी में उम्र (38 फीसदी) बढ़ने के कारण आई। अनियोजित गर्भधारण में भी गिरावट रही है।''

बेबी बस्ट के दौर से गुजर रही है आधी दुनिया

वैश्विक स्तर पर, जनसंख्या पर बहस अब प्रतिस्थापन स्तर (टीईआर 2.1) से नीचे जाती आबादी के परिणामों की ओर मुड़ गई है। ब्रिटिश पत्रिका द लांसेट की 2017 की रिपोर्ट में पाया गया कि दुनिया के आधे देश ''बेबी बस्ट'' (जन्मदर में अचानक गिरावट) के दौर से गुजर रहे हैं, जो कि पहले के ''बेबी बूम'' (जन्मदर में अचानक वृद्धि) के विपरीत है। अपनी मौजूदा जनसंख्या को बनाए रखने के लिए बच्चों की संख्या अपर्याप्त है। कई देशों की आबादी में गिरावट दर्ज की जा रही है। इनमें ग्रीस (1.3 टीएफआर), बुल्गारिया (1.58 टीएफआर), हंगरी (1.39 टीएफआर), पोलैंड (1.29 टीएफआर), इटली (1.40 टीएफआर), दक्षिण कोरिया (1.26 टीएफआर) और जापान (1.48 टीएफआर) शामिल हैं। यहां तक कि विकासशील देशों में भी यह प्रवृत्ति दिख रही है। चीन में अब प्रजनन दर 1.5, और ब्राजील में सिर्फ 1.8 है। 1976 के बाद से आधिकारिक तौर पर अपनी जन्म दर बढ़ाने की कोशिश कर रहे देशों की संख्या 9 प्रतिशत से बढ़कर लगभग 30 प्रतिशत हो गई है।

विशेषज्ञों का मानना हैं कि महिलाओं की शिक्षा, उनका स्वावलंबन के अतिरिक्त शहरीकरण भी इस गिरावट का एक महत्वपूर्ण कारण है। शहरों में एक बच्चा आर्थिक दायित्व बन जाता है। शहरों में महिलाओं पर अधिक बच्चे पैदा करने का सामाजिक दबाव भी कम होता है। मीडिया, स्कूलों और गर्भनिरोधकों तक उनकी पहुंच बढ़ जाती है। 2016 के बाद से पोलैंड प्रति बच्चा प्रति माह 100 पाउंड का भुगतान कर रहा है और वहां गर्भपात विरोधी सख्त कानून लागू है। हंगरी ने भी कोशिश की है। दक्षिण कोरिया कर (टैक्स) प्रोत्साहन, बेहतर शिशु देखभाल, आवास लाभ, बच्चे पैदा करने के लिए विशेष अवकाश, इन-विट्रो फर्टिलाइजेशन के लिए सहायता और उदार अभिभावकीय अवकाश जैसी सुविधाओं के माध्यम से अपनी अनिश्चित प्रजनन दर

को दोबारा बढ़ाने का प्रयास कर रहा है। चीन भी अब अपने लोगों से अधिक बच्चे पैदा करने की उम्मीद करता है। लेकिन कहीं भी कोई महत्वपूर्ण प्रभाव नहीं पड़ा है, जिससे यह संदेह भी बढ़ा है कि क्या गिरावट के बाद आबादी को प्रतिस्थापन-स्तर पर वापस लाया जा सकता है।

जनसंख्या नियंत्रण और पर्यावरण

1970 के दशक में कई पर्यावरणविदों ने जनसंख्या विस्फोट के कारण भविष्य में आने वाले संकट की चेतावनी दी थी। बढ़ती जनसंख्या पर्यावरण को दो प्रमुख रूपों में प्रभावित करती है। पहले में भूमि, भोजन, पानी, हवा, खनिज और जीवाश्म ईंधन सहित संसाधनों की खपत शामिल है और दूसरा अपशिष्ट उत्पादों के रूप में देखा जा सकता है, जिसमें प्रदूषक (हवा और पानी), विषाक्त पदार्थ और ग्रीनहाउस गैसें शामिल हैं।

लेकिन इस बात पर कोई एकमत नहीं है कि आबादी धरती के कितने संसाधनों का उपभोग करेगी और किस सीमा पर धरती बढ़ती आबादी का भार उठा पाने में सक्षम नहीं होगी। विशेषज्ञों का मानना है कि चिंता का विषय खपत नहीं है बल्कि खपत में असमानता और संसाधनों के असमान वितरण में है। विकसित दुनिया अधिकतम ऊर्जा और भोजन का उपभोग करती है। 21वीं सदी के अंत में यूरोप और अमेरिका ने दुनिया के 80 प्रतिशत संसाधनों का उपभोग कर चुका होगा। बेहतर आर्थिक स्थिति खपत को बढ़ाती है। सेज जर्नल में प्रकाशित 2009 के एक अध्ययन में बताया गया है कि जलवायु परिवर्तन के कारक के तौर पर जनसंख्या वृद्धि को दोष देना भ्रामक है। व्यवहारिक तौर पर पर्यावरण पर जनसंख्या के प्रभाव का खपत और उत्पादन के पैटर्न से काफी गहरा संबंध है। सतत विकास लक्ष्य-12 में भी कहा गया है कि टिकाऊ खपत और उत्पादन पैटर्न सुनिश्चित करें। हालांकि, धनी आबादी को नियंत्रित करना काफी महत्वपूर्ण है, क्योंकि वे अपने उच्च खपत स्तर से प्रति व्यक्ति अधिक नुकसान पहुंचाते हैं।

जनसंख्या का सवाल दुनिया के अन्य देशों के लिए भी एक महत्वपूर्ण राजनीतिक मुद्दा रहा है। 2010 में तत्कालीन ऑस्ट्रेलियाई प्रधानमंत्री जूलिया गिलार्ड ने चुनाव अभियान के दौरान कहा कि चुनाव जीतने के लिए उन्हें गंभीर जलवायु परिवर्तन नीति की आवश्यकता नहीं। इसके बजाय उन्होंने ''सस्टेनेबल अहस्ट्रेलिया'' को अपने एजेंडे के रूप में रखा, जो कम जनसंख्या वृद्धि की वकालत करता था। तात्कालीन अमेरिकी राष्ट्रपति डोनाल्ड ट्रम्प ने आप्रवासन को अपने अभियान का केंद्र बनाया। उन्होंने इस पर एक विस्तृत नीति की पेशकश की। उन्होंने इस डर को पूरी तरह भुनाया कि कम अमेरिकी आबादी अंततः अप्रवासियों द्वारा अधिग्रहण की ओर ले जाएगी। यूनाइटेड किंगडम में प्रधानमंत्री बनने से बहुत पहले 2016 में बोरिस जॉनसन ने यूरोपीय संघ छोड़ने के अभियान का नेतृत्व किया। उस समय और उसके बाद से ही प्रवासन ब्रेक्जिट पर सार्वजनिक बहस का एक महत्वपूर्ण मुद्दा बन गया। प्रधानमंत्री के रूप में अपने पहले भाषण में जॉनसन ने जोर देकर कहा कि वह अनियमित प्रवासन दिशा-निर्देशों को सख्त बनाएंगे। ब्राजील के राष्ट्रपति जेयर बोल्सोनारो ने जलवायु परिवर्तन के लिए जनसंख्या वृद्धि को जिम्मेदार ठहराया है।

दुनिया प्रजनन दर को नाटकीय रूप से कम करने में कामयाब रही है। 1970 के दशक में प्रति महिला 4.5 बच्चे से घटकर अब यह 2.5 तक पहुंच गई है। खासकर महिलाओं में अधिक शिक्षा, स्वास्थ्य और गर्भनिरोधक के इस्तेमाल का अधिकार इसमें काफी मददगार साबित हुआ है। इसने महिलाओं को अविश्वसनीय रूप से और बेहतर व सशक्त बनाया। साथ ही उन्हें छोटे आकार के परिवार का चयन करने में सक्षम बनाने के लिए स्वतंत्र किया।

विशेषज्ञों का मानना है कि वस्तुतः भारत जनसंख्या को स्थिर करने की राह पर है। इसलिए जनसंख्या नियंत्रण को सुनिश्चित करने के लिए दंडात्मक उपायों की शुरुआत पर जोर दिया जाना गैरजरूरी है। वास्तव में दो बच्चों की नीति लागू करने के लिए विभिन्न प्रकार के प्रतिबंध लगाने वाले राज्य अब अपने कदम वापस खींच रहे हैं। दो बच्चों की नीति लागू करने वाले 12 राज्यों में से 4 राज्य इसे पहले ही रद्द कर चुके हैं। दंडात्मक कार्रवाई दुनिया भर में बढ़ती आबादी को रोकने विफल रही है। मध्य प्रदेश की पूर्व मुख्य सचिव निर्मला बुच द्वारा आंध्र प्रदेश, हरियाणा, मध्य प्रदेश, ओडिशा और राजस्थान में दो से अधिक बच्चों वाले लोगों की योग्यता को प्रतिबंधित करने वाले कानूनों पर किए गए एक अध्ययन में यह निष्कर्ष निकला कि दो बच्चों का मानक लोगों के लोकतांत्रिक और प्रजनन अधिकारों का उल्लंघन करता है।

बुच कहती हैं, ''हमारे उत्तरदाताओं में से महिलाओं की एक बड़ी संख्या (41 प्रतिशत) ने बताया कि दो बच्चों के मानक का उल्लंघन करने की वजह से उन्हें अयोग्य घोषित किया गया। दलित उत्तरदाताओं के बीच यह अनुपात और भी अधिक (50 प्रतिशत) था।'' यहाँ यह बात भी विचारणीय है कि अशिक्षित और रूढ़िवादी व्यवस्था में कई बार महिलाएं अपने बच्चों की संख्या का निर्धारण नहीं कर पातीं, ऐसे में उन्हें अयोग्य घोषित करना उनके अधिकारों का उल्लंघन है।

2013 में चीन ने अपनी 1979 में लागू हुई कुख्यात एक बच्चे की नीति में थोड़ी ढील दी। द इंस्टीट्यूट फॉर पॉपुलेशन एंड डेवलपमेंट स्टडीज, शीआन जियाओतोंग विश्वविद्यालय, चीन के 2016 में हुए एक अध्ययन द हिस्ट्री ऑफ द फैमिली जर्नल के अनुसार, इस नीति के परिणामस्वरूप सेक्स-चयनात्मक गर्भपात, गिरते प्रजनन स्तर, जनसंख्या में वृद्ध लोगों की संख्या में बढ़ोत्तरी, श्रमिकों की कमी और आर्थिक मंदी जैसे अवांछनीय परिणाम सामने आए। यह कहा जा सकता है कि दंडात्मक उपाय मानवाधिकारों के नजरिए से अनुचित लगते हैं। इसके बदले भारतीय महिलाओं की शिक्षा तक अधिक पहुंच होने से जनसंख्या नियंत्रण की दिशा में अधिक प्रभाव पड़ेगा।

■ *(यह आलेख भारत में जनसंख्या नियंत्रण कानून पर बीबीसी में छपी श्रंखला पर आधारित है।)*

मानवाधिकार हैं वैश्विक चुनौतियों के समाधान की बुनियाद

संयुक्त राष्ट्र समाचार

संयुक्त राष्ट्र महासचिव एंटोनियो गुटेरेश ने मानवाधिकार परिषद के 49वें सत्र के लिये अपने वीडियो सन्देश में कहा कि मानवाधिकारों पर हर कहीं प्रहार हो रहा है, निरंकुशताएं बढ़ रही हैं, और लोकप्रियतावाद, नस्लवाद व चरमपंथ से समाज कमजोर हो रहे हैं। उन्होंने जोर देकर कहा कि इन सभी विशाल चुनौतियों के समाधानों की बुनियाद, मानवाधिकारों में है। महासचिव ने कहा कि कोविड-19 महामारी, विषमताएं और जलवायु संकट के कारण सम्पूर्ण महाद्वीपों और क्षेत्रों के सामाजिक व आर्थिक अधिकार छिन्न-भिन्न हो रहे हैं, "विभाजन गहरे हो रहे हैं, संशय और स्व-हित उभार पर हैं।" उन्होंने ऐसे समाधानों पर ध्यान केन्द्रित करने का आह्वान किया, जो बुनियादी व चिरस्थाई मानवाधिकारों पर आधारित हों।

यूएन प्रमुख ने जोर देकर कहा कि मानवाधिकारों को कोई भी तानाशाह जब्त नहीं कर सकता और ना ही उन्हें गरीबी द्वारा मिटाया जा सकता है, "तानाशाह जानते हैं, मानवाधिकार, उनके शासन के लिये सबसे बड़ा खतरा पैदा करते हैं।" उन्होंने कहा कि आमजन में अपने अधिकारों व आजादियों के लिये चेतना अंतर्निहित है और दमन के विरुद्ध हर आन्दोलन, अन्याय के विरुद्ध हर प्रदर्शन मानवाधिकारों को पुष्ट करता है।

महासचिव ने पिछले महीने यूएन महासभा में सम्बोधन के दौरान उल्लेखित अपनी पाँच प्राथमिकताओं का जिक्र किया, जोकि विश्व के समक्ष बड़े खतरों की ओर इंगित करती हैं- कोविड-19, वैश्विक वित्त पोषण, जलवायु कार्रवाई, साइबर जगत में अराजकता, और शान्ति व सुरक्षा। उन्होंने कहा कि इन सभी संकटों के समाधानों की बुनियाद, मानवाधिकार आधारित उपायों में मौजूद है।

नागरिक व राजनैतिक अधिकारों के उल्लंघन, सामूहिक निगरानी, भेदभाव और अभिव्यक्ति की आजादी पर रोक जैसी चुनौतियों से निपटने के लिये कार्रवाई को मानवाधिकारों पर आधारित बनाना होगा।

कोविड-19

यूएन प्रमुख ने ध्यान दिलाया कि कोविड-19 महामारी के दौरान निर्बल व हाशिये पर मौजूद समुदाय सर्वाधिक प्रभावित हुए हैं। वैश्विक टीकाकरण में भी विषमता व्याप्त है और उच्च-आय वाले देशों में निम्न-आय वाले देशों की तुलना में, प्रति व्यक्ति 13 गुना अधिक खुराकें दी गई हैं।

महासचिव गुटेरेश ने कहा कि स्वास्थ्य देखभाल अधिकार, मानवाधिकार हैं, और सार्वजनिक रकम से विकसित की गई वैक्सीन का उपयोग, न्यायसंगत ढंग से सार्वजनिक भलाई के रूप में किया जाना चाहिये। उन्होंने देशों की सरकारों, कम्पनियों व साझीदार संगठनों से यूएन स्वास्थ्य एजेंसी को हरसम्भव राजनैतिक व वित्तीय समर्थन देने का आग्रह किया ताकि हर देश में 70 फीसदी आबादी का टीकाकरण किया जा सके।

उन्होंने कहा कि नागरिक व राजनैतिक अधिकारों के उल्लंघन, सामूहिक निगरानी, भेदभाव और अभिव्यक्ति की आजादी पर रोक जैसी चुनौतियों से निपटने के लिये कार्रवाई को मानवाधिकारों पर आधारित बनाना होगा। यूएन प्रमुख के मुताबिक, मानवाधिकारों पर कार्रवाई की पुकार, एजेण्डा 2030 और टिकाऊ विकास लक्ष्यों में इसे स्पष्टता से पेश किया गया है। उन्होंने कहा, "हमें अधिकार-आधारित समाधानों और समावेशी, टिकाऊ विकास, और सर्वजन के लिये अधिकारों व अवसरों पर आधारित उपायों की आवश्यकता है।"

वैश्विक वित्त पोषण

वैश्विक महामारी से असमान पुनर्बहाली, वैश्विक वित्तीय प्रणाली के नैतिक दिवालियेपन को दर्शाती

है। महामारी के कारण विकासशील देशों के समक्ष चुनौतियां पैदा हुई हैं, वे कर्ज अदायगी में लड़खड़ा रहे हैं और कुछ ही देश टिकाऊ व मजबूत पुनर्बहाली में निवेश में सक्षम हो पाएंगे। यूएन प्रमुख ने कहा कि सत्ता, सम्पदा और अवसरों को व्यापक व निष्पक्ष रूप से साझा किये जाने के लिये एक नया वैश्विक समझौता, एक मानवाधिकार अनिवार्यता है। इसके लिये, वैश्विक वित्तीय प्रणाली में आमूल-चूल परिवर्तन करना होगा, और एक नए सामाजिक अनुबन्ध में फिर से ऊर्जा भरनी होगी ताकि निर्धनता व भुखमरी से लड़ा जा सके। शिक्षा व जीवन-पर्यन्त सीखने में निवेश हो और सामाजिक जुड़ाव व भरोसा बहाल किया जा सके।

जलवायु संकट

यूएन प्रमुख का मानना है कि जलवायु संकट, मानवाधिकारों का भी संकट है। जलवायु परिवर्तन, प्रदूषण और प्रकृति स्वास्थ्य से जुड़े संकटों से मानवाधिकारों के लिए भी चुनौती पैदा हो रही है। बाढ़, सूखे और बढ़ते समुद्री जलस्तर से व्यापक मानवीय विनाश होने, भोजन की किल्लत होने और प्रवासन की आशंका है।

उन्होंने इस चुनौती से निपटने में युवजन, महिलाओं, लघु द्वीपीय देशों और आदिवासी समुदायों के प्रयासों का स्वागत किया और कहा कि यूएन उनके साथ खड़ा है। महासचिव ने स्वस्थ पर्यावरण के अधिकार को मानवाधिकार परिषद द्वारा मान्यता दिये जाने का स्वागत किया और कहा कि यह जवाबदेही और जलवायु न्याय के लिये एक अहम औजार है। पैरिस जलवायु समझौते में, वैश्विक तापमान को 1.5 डिग्री सेल्सियस तक सीमित रखना बेहद अहम है, ताकि मानवता के विरुद्ध अपराध से भी गम्भीर मानवीय पीड़ा को टाला जा सके।

डिजिटल टैक्नॉलॉजी

यूएन प्रमुख के अनुसार, दो अरब 90 करोड़ लोगों के बीच पसरी डिजिटल खाई, इंटरनैट में अवरोध, भ्रामक सूचना का फैलना, और स्पाईवेयर के इस्तेमाल से मानवाधिकारों को चोट पहुंच रही है। उन्होंने कहा कि जातीय व धार्मिक अल्पसंख्यकों, एलजीबीटीआईक्यू, युवजन, आदिवासी समुदाय व महिला अधिकार कार्यकर्ताओं के विरुद्ध सेन्सरशिप व ऑनलाइन हमले बढ़े हैं।

कृत्रिम बुद्धिमत्ता (एआई) के इस्तेमाल से भेदभाव और बहिष्करण बढ़ रहा है और एआई पर आधारित हथियारों से मानवाधिकारों के लिये बड़ा जोखिम है। इन चुनौतियों से पार पाने के लिये डिजिटल माध्यमों को सर्वजन के लिये समावेशी व सुरक्षित बनाने का आग्रह किया गया है और आगाह किया गया है कि सतर्कता बरतने के साथ-साथ जायज चर्चा को बढ़ावा दिया जाना होगा। इसके लिये, नियामक फ्रेमवर्क्स को मानवाधिकारों पर आधारित बनाना होगा और इसके लिये समावेशी चर्चा को बढ़ावा दिया जाना होगा।

हिंसक संघर्ष व टकराव

यूएन प्रमुख ने कहा कि दुनिया भर में हिंसक संघर्षों व टकरावों का दायरा बढ़ा है जिससे लाखों-करोड़ों लोगों के मानवाधिकारों पर संकट है। यूक्रेन में रूसी महासंघ के सैन्य अभियान में तेजी से मानवाधिकार हनन के मामले बढ़े हैं। उन्होंने कहा कि युद्धों में आम नागरिक हताहत होते हैं और पत्रकारों व कार्यकर्ताओं की अभिव्यक्ति की आजादी पर हमले होते हैं।

यूएन प्रमुख के मुताबिक, हिंसक टकराव में फंसे आमजन के लिये सुरक्षा व संरक्षण के अधिकारों के हनन के साथ-साथ, भोजन, स्वच्छ जल, स्वास्थ्य देखभाल, शिक्षा व रोजगार सम्बन्धी अधिकार प्रभावित होते हैं। उन्होंने म्यांमार से लेकर अफगानिस्तान, इथियोपिया और अन्य देशों में अल्पसंख्यकों के अधिकारों की रक्षा किये जाने, और युद्ध के दौरान व उसके बाद, सर्वजन के अधिकार सुनिश्चित किये जाने का आग्रह किया। ■

खैरा पहाड़िया आदिम जनजाति समुदाय के साथ अनौपचारिक चर्चा

23 अप्रैल 2022 को झारखंड में देवघर जिले के मथुरापुर प्रखंड के धनफरी गांव के पुजहर समुदाय के साथ एक अनौपचारिक बैठक का आयोजन किया गया। इस समुदाय के लगभग 30 लोगों ने बैठक में भाग लिया। ये लोग मूल रूप से खैरा पहाड़िया आदिम जनजाति के हैं जिसका उल्लेख भूमि अभिलेख में भी मिलता है। यह लोग कभी राजमहल पहाड़ियों पर निवासरत थे लेकिन अब नीचे उतर कर पहाड़ के तलहटी क्षेत्र में निवास करते हैं। उनके रहने की स्थिति और सामाजिक व्यवहार पीवीटीजी के समान हैं।

इन लोगों से बातचीत के दौरान उन्होंने दो महत्वपूर्ण मुद्दे उठाए, पहला सुरक्षित पेयजल की कमी और दूसरा पहचान का सवाल। उन्होंने दावा किया कि 40-45 घरों में केवल दो हैंडपंप हैं। वे पानी लाने के लिए पहाड़ों से आने वाले पानी के एक पतले स्रोत (झोरिया) पर काफी हद तक निर्भर हैं। दूसरी ओर रहने की स्थिति और सामाजिक व्यवहार में वे लगभग आदिम जनजातियों के समान हैं लेकिन राज्य में विशेष रूप से कमजोर जनजाति के रूप में नहीं माने जाते हैं जिसके कारण क्षेत्र के पीवीटीजी के लिए बनाई गई विशेष योजनाओं का लाभ प्राप्त करने से वंचित रहतें हैं।

बच्चों के मुद्दों पर समाज और मीडिया को साथ चलने की जरूरत

उदासीनता सबसे खतरनाक बीमारी है जो लोगों को प्रभावित कर सकती है और अगर यह उदासीनता बच्चों के प्रति है तो इसका प्रभाव अकल्पनीय रूप से खतरनाक होगा। पैरवी व पेन मीडिया फाउंडेशन द्वारा 1 व 2 मई को बाल अधिकार और मीडिया विषय पर आयोजित दो दिवसीय कार्यशाला में बिहार के विभिन्न जिलों से आए सामाजिक कार्यकर्ताओं, पत्रकारिता के विद्यार्थियों व मीडिया प्रतिनिधियों ने विभिन्न पहलुओं पर बोलते हुए यह बात कही।

वक्ताओं ने कहा कि बच्चों पर मीडिया कवरेज असंगत है और इसमें गहराई का अभाव है। बच्चों से संबंधित घटनाओं को नियमित रिपोर्टिंग से परे जा कर उसे संदर्भ और परिप्रेक्ष्य में मानवीय दृष्टिकोण से देखना जरूरी है। हमारी शब्दावली में आज भी पुराने कानूनों के सम्बोधन हैं। इसे बदलने की जरूरत है। वहीं न केवल खबरों की बल्कि खबर के लिए बच्चों से की जाने वाली बातचीत की भाषा भी बच्चों के प्रति संवेदनशील होनी चाहिए। कार्यशाला मे बच्चों को सुने जाने पर सभी वक्ताओं ने जोर दिया और कहा कि बच्चों की कहानी या उनके साथ हुई घटना का उल्लेख करते समय इस बात का ध्यान रखना बहुत जरूरी है कि बच्चों का हित सर्वप्रथम है। चाहे वह कोई पत्रकार हो, पुलिस अधिकारी हो या सामाजिक कार्यकर्ता उन्हे बच्चों की बात सुनने के लिए धैर्य रखना होगा और समय देना होगा। खबर लिखते समय उस बच्चे की जगह खुद को रखकर देखें तो बच्चे की बात को बेहतर समझा जा सकता है।

वक्ताओं ने कहा कि अब मीडिया का संदर्भ व्यापक हो रहा है। सोशल मीडिया ने सभी को पत्रकार बना दिया है। कोई भी अपनी कहानी अब सोशल मीडिया पर लिख सकता है। इसलिए हमें बच्चों के सर्वोत्तम हित को केंद्र में रखते हुए और अधिक सचेत और सजग रहने की जरूरत है।

राज्य मानवाधिकार आयोग और जिला मानवाधिकार न्यायालय की भूमिका को मजबूत करने पर परिचर्चा

राज्य मानवाधिकार आयोग और जिला मानवाधिकार न्यायालय की भूमिका को मजबूत करने पर परिचर्चा का आयोजन 17 अप्रैल को पैरवी और कानूनी सहायता समिति, राम मनोहर लोहिया नेशनल लॉ यूनिवर्सिटी, लखनऊ द्वारा संयुक्त रूप से किया गया था। परिचर्चा का आयोजन उत्तर प्रदेश मानवाधिकार आयोग व जिला मानवाधिकार न्यायालयों पर अध्ययन की मसौदा रिपोर्ट साझा करने के लिए किया गया था। विधिक सहायता समिति के अध्यक्ष डॉ. मनीष सिंह ने उद्घाटन भाषण दिया। डॉ. विकास भाटी, फैकल्टी आरएमएलएनएलयू ने डिजिटल मानवाधिकारों के महत्व पर बात की। डॉ. एडी सिंह, फैकल्टी आरएमएलएनएलयू ने एसएचआरसी और जिला मानवाधिकार न्यायालयों पर अध्ययन के प्रमुख निष्कर्षों की जानकारी दी। अन्य पैनलिस्टों ने भी राज्य मानवाधिकार आयोग और जिला मानवाधिकार न्यायालय की भूमिका पर अपने विचार साझा किए। परिचर्चा में लगभग 50 कानून शोध विद्वानों, शिक्षाविदों, अधिवक्ताओं और सामाजिक कार्यकर्ताओं ने भाग लिया।

'तलाश नये अवसर की' विषय पर परामर्श

अंतर्राष्ट्रीय महिला दिवस के अवसर पर सावित्री बाई फुले ऑडिटोरियम, समस्तीपुर, बिहार में पैरवी और जवाहर ज्योति बाल विकास केंद्र द्वारा 'तलाश नये अवसर की' विषय पर परामर्श का आयोजन किया गया। परामर्श में बड़ी संख्या में महिला श्रमिकों और किशोरियों ने भाग लिया। परामर्श मुख्य रूप से लैंगिक समानता, समान अवसर, और आजीविका व शिक्षा के अधिकार पर केंद्रित था। महिला बीड़ी श्रमिकों ने भी परामर्श में भाग लिया और अपनी चिंताएं साझा कीं। पैनलिस्टों ने किशोरियों के खिलाफ अपराध, खासकर यौन उत्पीड़न, तस्करी, बाल विवाह व बाल श्रम के बारे में चर्चा की। उन्होंने महिलाओं के खिलाफ बढ़ते अपराधों पर चिंता जताई और महिलाओं के मुद्दों से निपटने के लिए एक बड़े सामाजिक गठबंधन का आग्रह किया है। महिला दिवस के अवसर पर संगठन द्वारा महिला प्रतिभागियों और पैनलिस्टों को सम्मानित किया गया।

संपादक मंडलः **प्रो. संजय भट्ट, अजय के. झा**
पैरवी के-8, तीसरा तल, लाजपत नगर-3, नई दिल्ली-110024 द्वारा सीमित प्रसार के लिए प्रकाशित
संपर्क - फोनः 011-29841266, 46101652 | ईमेलः pairvidelhi1@gmail.com, info@pairvi.org | वैबसाइटः www.pairvi.org